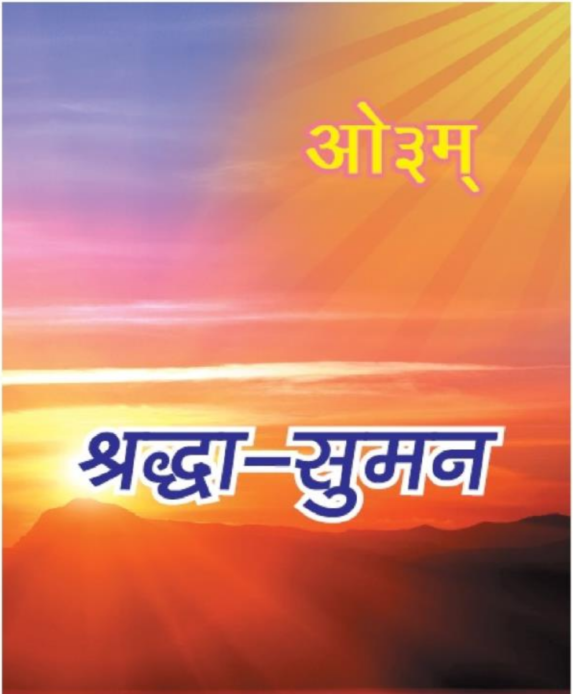
ओ३म्
श्रद्धा–सुमन

।। ओ३म् ।।

श्रद्धा–सुमन

श्रद्धेय पिता श्री ओमवीर सिंह जी

और

माता श्रीमती मिथिलेश कुमारी जी

की पुण्य स्मृति में प्रकाशित

अनुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ
1	प्राक्कथन	2
2	भूमिका	3
3	आशीर्वचन	6
4	संकलन (डायरी से)	7
5	परिशिष्ट	31

।। प्राक्कथन ।।

श्रवणायपि बहुभिर्यो न लभ्यः
श्रण्वन्तोऽपि बहवो यन्न विद्युः।
आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धा
आश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः।।

(कठोपनिषद 1/2/7)

परमात्मा संबंधी ज्ञान अति दुर्लभ है। इस मन्त्र में यमराज, नचिकेता को कहते है कि भोगासक्त, आलसी व्यक्तियों को तो यह आत्मा–परमात्मा संबन्धी ज्ञान सुनने को ही नहीं मिलता। संयोगवश सुनने का अवसर प्राप्त होने पर आसानी से समझ में नहीं आता। यदि किन्चित् समझ में भी आ जावे तो इस सूक्ष्म ज्ञान को व्यवहार में लाना या क्रियान्वयन दुर्लभतम है। इस ब्रह्मविद्या का उपदेश करने वाला और सुनने वाला, एक आश्चर्य ही है, अर्थात कोई विरला ही इसे पूर्णरुपेण प्राप्त करके अपने जीवन को सफल/कृत्कृत्य कर पाता है।

*****

प्रेरणा स्रोत

महर्षि दयानन्द सरस्वती
महात्मा नारायण सिंहजी
स्वामी महेन्द्र मुनिजी
स्वामी सत्यबोध सरस्वतीजी

In Loving Memory

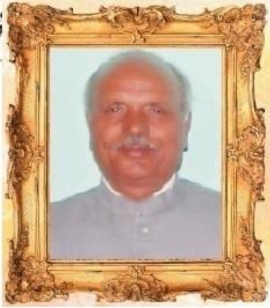

Shri Om Veer Singhji & Smt. Mithilesh Kumari

Those we love don't go away, they walk beside us everyday.
Your principles guide us everyday
and your life continues to light our path.

Ved Veer Singh & Arati Jadon
Suman Jadon & Anang Pal Singh
Yaksh Veer Singh

Aditya Singh, Hiyanshi , Rudra Pratap Singh, Utkantha

Members of Jadon Family

।। ओ३म् ।।

भूमिका

अधिकांश माता–पिता अपनी संतान के लिए जीवन भर धन संपति इकठ्ठा करते है व मृत्योपरांत इतनी संपत्ति देकर जाना चाहते है कि उनकी संतान का जीवन यापन सुखपूर्वक हो सके। परन्तु आपका (माता–पिता) मानना था कि, यदि संतान सदाचारी व धार्मिक न हो तो यह संपत्ति कुलनाश का ही कारण होती है। आपने पूरा जीवन सदाचारयुक्त, ईमानदारीपूर्वक व ईश्वरपरायण होकर बिताया। जिससे हमें बाल्यकाल से ही वेद शास्त्रो का श्रवण व धार्मिक संस्कार प्राप्त हुए।

माताजी श्रीमती मिथिलेश कुमारी, सरल, श्रद्धावान, सेवाभावी, भक्तिवान व तपोमूर्ति थीं। उनकी अपनी आवश्यकताएं बहुत कम थी, उन्होंनें अपना पूरा जीवन अपने पुत्र/पुत्री के हित में बिताया। कभी भी अपने सुख सुविधा की ओर ध्यान नहीं दिया। नियमित प्रातः सांय संध्या, स्वाध्याय, सत्संग, गायत्री जप व यज्ञादि करना, इनकी दिनचर्या का अंग था। अचानक

17 नवम्बर 2014 को इनके देहान्त ने सभी परिवार सम्बन्धियों में शोक की लहर उत्पन्न की। 19–20 नवम्बर, 2014 को आत्मा की शान्ति के लिए वेद मन्त्रों से परिपूर्ण यज्ञानुष्ठान आयोजित हुआ।

पिताजी श्री ओमवीर सिंह, का कार्यक्षेत्र अध्यापन का था। जो कि अधिकांश समय व्याख्याता के पद पर रहे। इन्होंने हमेशा गरीब जरुरतमन्द विद्यार्थियों की हर तरह से सहायता की। ये अपने युवाकाल में आर्यसमाज के सम्पर्क में आये, अन्त तक उससे जुड़े रहे। इनका सम्पर्क उन्हीं व्यक्तियों से विशेष हुआ, जो ईश्वर प्राप्ति के लिए प्रयासरत थे। सेवानिवृति के पश्चात आप में संसार से विरक्ति व ईश्वर प्राप्ति की इच्छा और बढ गयी। कालक्रम से आपका देहावसान 15 नवम्बर 2017 को हुआ। प्रस्तुत पुस्तक उनकी व्यक्तिगत डायरी से संकलित है। आशा है कि यह अध्यात्म मार्ग पर चलने वालों को मार्गदर्शन करेगी, जगह–जगह पर हृदय के ये उद्गार भावविभोर कर जाते है।

अन्त में हम आपके आभारी है कि, आपने हमारे जीवन को उचित दिशा प्रदान करके, धार्मिक संस्कार देकर व अर्थोपार्जन के लिए उचित शिक्षा देकर हमें योग्य बनाया। आपका जीवन सदैव हमारा मार्गदर्शन करता रहेगा, हम अश्रुपूरित नैत्रों से आपको श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

स्मरण कर आपका **श्रद्धा – सुमन** अर्पित करते हैं।
सदैव रहे आपका आशीर्वाद, प्रभु से प्रार्थना करतें हैं ॥

मीठी मधुर स्मृतियाँ आपकी, कभी नहीं मिट पायेंगी।
आपका व्यवहार आपकी बातें, सदैव हमें याद आयेंगी ॥
।। ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

समस्त परिवार
ए 29, शिवपुरी, एयरपोर्ट
सांगानेर, जयपुर 302011.

*****

॥ ओ३म् ॥

वानप्रस्थ साधक आश्रम

Vaanprasth Sadhak Aashram

योगादेव तु कैवल्यम्

(साधना, स्वाध्याय, सेवा तथा वैदिक विद्वान, वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों के निर्माण हेतु भव्य परियोजना)

आर्य वन, रोजड़, पत्रा. : सागपुर, जिला. साबरकांठा-३८३३०७, गुजरात, भारत

Aaryavan, Rojad, Po. : Sagapur, Dist. : Sabarkantha-383 307, Gujarat, India

ट्रस्ट रजिस्ट्रेशन क्रमांक ई-२५३२/सा.कां.

।। ओ३म् ।।

14.12.2017

श्री ओमवीर सिंह जी में बुद्धि के साथ हृदय की प्रधानता भी थी। अचानक उनका देहत्याग हुआ। उसके बाद उनकी लिखी सूक्तियों को देखना उनके अन्तःकरण की भक्ति–पवित्रता निष्ठा–समर्पण को पुष्ट कर गया। लगभग 18 वर्ष पूर्व उनसे संपर्क हुआ। पिछले 8–10 वर्षों में उनसे चर्चा–विमर्श अधिक हुआ। वे धर्मनिष्ठ, स्वाध्याय प्रेमी व भावुक व्यक्ति थे। एक ओर अपने सिद्धान्तों–नियमों में स्वयं भी कठोर थे तो दूसरी ओर अन्यों से भी कठोर अपेक्षा रखते थे। किन्तु हृदय के स्तर पर बहुत भावुक व श्रद्धान्वित थे। अन्तिम कुछ वर्षों व माहों में उनमें विरक्ति का भाव बहुत बढ़ गया था। वे ईश्वर की निकटता की ललक बढ़ाते चले गये थे।

इनके दोनों सुपुत्र व एक सुपुत्री इनके संस्कारों से अनुप्राणित हैं, जीवन में अच्छा करने की कामना से सतत कार्यरत हैं। इनके द्वारा पिताजी के अमूल्य वचन संग्रह को जन–जन के लाभार्थ प्रकाशित करने का कार्य बधाई के योग्य है।

समस्त परिवार को शुभकामनाएँ एवं आशीर्वाद।

प्रभुकृपा

निवेदक

आचार्य सत्यजित् आर्य

आचार्य सत्यजित् आर्य
आचार्य एवं प्रबन्धक न्यास
वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन
साबरकांठा (गुजरात)

TEL : +91(02770) 287417, 291555 EMAIL : vaanaprastharojad@gmail.com WEBSITE : www.vaanaprastharojad.org

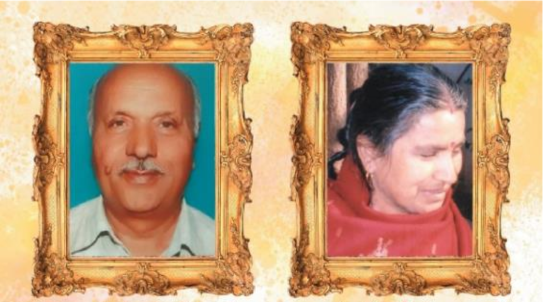

पिता- श्रीओमवीर सिंह जी : माता- श्रीमती मिथिलेश कुमारी

(जन्म -26.7.1949, देहान्त-15.11.2017) : (जन्म -1951, देहान्त-17.11.2014)

।। ओ३म् ।।

4. संकलन (डायरी से)

(श्री ओमवीर सिंह जी के देहत्याग के उपरान्त हमें उनकी एक व्यक्तिगत डायरी मिली, उसी को लोकहितार्थ प्रकाशित किया जा रहा है)

- शुभ कर्मों तथा प्रभु कृपा के योग से मनुष्य का जीवन प्राप्त होता है।
- सृष्टि में मनुष्य की योनि को सभी ग्रन्थों व संन्तों ने सर्वश्रेष्ठ बताया है।
- प्रभु कृपा से प्राप्त इस अवसर का उपयोग हमें प्रभु की प्राप्ति हेतु करना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि यही रह जाने वाले भौतिक संसाधनों को जुटाने में ही यह सुअवसर हाथ से निकल जाये।
- यात्रा या काम पर जाने के लिए टिफिन लेकर जाते हो तो महायात्रा के लिए भी पुण्य संचित करते रहो।
- सामान्यतः लोग ऐसा सौदा करते हैं, जिसमें अधिक से अधिक लाभ हो, जो लम्बे समय तक सुख–सुविधा प्रदान करे। बन्धुओं, कोई भी सौदा अनन्तकाल तक अनन्त सुख नहीं दे सकता। अनन्त

सुख तो अनन्त प्रभु की भक्ति तथा आज्ञापालन में ही है। प्रभु का भण्डार कभी खाली नहीं होता।

- कम से कम इतना तो अवश्य ही करो कि अनेक जन्मों के शुभ कर्मों तथा प्रभु कृपा से मिला यह मानव शरीर हम से छिनने न पाये। गलियों में घूमते हुए शूकर, कूकर आदि पर दृष्टि डाला करो। मुक्ति का द्वार है यह मानव शरीर, अन्दर प्रवेश का प्रयास करो।
- सदैव ध्यान रखो कि परमपिता परमात्मा हमारे प्रत्येक कर्म को देख रहा है। हमारे द्वारा किये हुए शुभ व अशुभ कर्मों का फल हमें अवश्य ही भोगना पड़ता है।
- नित्य प्रति कुछ पुण्यकर्मों का संचय अवश्य करना चाहिए।
- पुण्य कर्मों को करने के बाद प्रभु का धन्यवाद कीजिए और अतिरिक्त बल की मांग कीजिए।
- आत्म निरीक्षण (दिन भर के कार्यों का अवलोकन) से आध्यात्मिक उन्नति में सहयोग मिलता है।
- भौतिक सुख व आध्यात्मिक आनन्द की कोई तुलना नहीं है। एक का मुख बाहर की ओर खुलता है

तथा नाशवान है, जबकि दूसरे का मुख अन्दर की ओर है तथा अक्षुण्ण है, तृप्ति दायक है।

- यदि आपकी कोई बुद्धि तथा हृदय दोनों ही ईश्वर की ओर लगे हैं, तो सत्य/प्रभु का द्वार आपसे दूर नहीं, बस लगे रहिए।
- यदि आपको अपने दुरित दिखाई देने लगे हैं तो यह बहुत ही शुभ लक्षण है, बस उन्हें दूर करने के प्रयास में लग जाइये। यदि अपेक्षित सफलता नहीं मिल रही है तो अन्तर्यामी प्रभु से प्रार्थना कीजिए, सफलता मिलेगी।
- कभी अपने को अकेला महसूस मत कीजिए। परमदयालु, सर्वशक्तिमान प्रभु सदैव आपके साथ है।
- प्रभु कृपा को अनुभव कीजिए, मैंने एक गृहस्थ सन्त को देखा है (जो अब उस शरीर में नहीं है)। जो कि किसी भी शुभ या अशुभ परिणाम में बाल सुलभ हंसी के साथ कहते थे ''अच्छा हुआ''।
- दैवीय मार में भी प्रभु का प्यार छिपा हुआ है इसे अनुभव करने का प्रयास करें।

- सरलता प्रभु के निकट ले जाती है परन्तु सरलता व अज्ञानता में अन्तर है।
- मन में कुछ, वाणी (शब्दों) में कुछ और तथा कर्म (व्यवहार) में कुछ और ही। ऐसे कुटिल व्यक्ति परमात्मा को नहीं पा सकते। ये लोग नाशवान भौतिक संसाधन तो एकत्र कर सकते हैं पर उनका उपभोग कर पायें जरुरी नहीं।
- जब आपको सांसारिक भोगों से उदासीनता तथा प्रभु भजन, एकान्त सेवन, भद्र पुरुषों से मिलन, सत्संग आदि की प्रेरणा उठे तो समझिये कि प्रभु आपको अपनी ओर खींच रहे हैं। इसका लाभ उठाइये। सत्संग के नाम पर चल रही विज्ञापनी दुकानों से सावधान रहें।
- अन्धाधुन्ध (सत्संग के नाम पर एकत्रित) भीड़ से प्रभावित न हो। स्मरण रहे खराब वस्तुओं को चिल्ला–चिल्ला कर सस्ते दामों पर बेचने वालों की दुकान पर भीड़ मिलेगी, जौहरी की दुकान पर नहीं।
- गायत्री मन्त्र या ''ओ३म'' के जप से सफलता की ओर अग्रसर होंगे।

- सदेव प्रार्थना व कामना कीजिए कि हम भगवान से जुड़े रहे, संसारी मनुष्यों तथा सुखों की चिन्ता छोड़ दीजिए।
- शास्त्र, वेद, ग्यारह उपनिषदों व दर्शन शास्त्रों के अध्ययन द्वारा परमात्मा को जानिए तथा जप व ध्यान द्वारा अन्दर डुबकी लगाईये।
- परमात्मा को भूलना तथा अपना नुकसान करना दोनों एक ही बात है।
- अपने गुरू या आदर्श पुरुष के चित्र तक ही सीमित न रहिए अपितु उनके चरित्र व शिक्षाओं को जीवन में उतारना ही सच्ची पूजा है।
- महापुरुषों के चित्रों को देखकर चरित्र की शिक्षा लीजिए। उनके चित्र आदि पर फूल (सुमन) चढ़ाकर प्रकृति का नाश करने के बजाय उन्हें सच्चे सुमन (सु+मन= मन के पवित्र विचार भाव) अर्पित करें। फूल पौधों पर रहते हुए जितना उपकार करते हैं, वे ही पानी या नाली में सड़कर अपकार करते हैं।
- अपनी इच्छाओं को कम करने तथा नियमित ध्यान के अभ्यास से आध्यात्मिक एकाग्रता की स्थिति बनने लगती है।

- जो सुख सुविधा के साधन, इष्ट मित्र तथा सम्बन्धी परमात्मा मिलन में बाधक प्रतीत है उन्हें दूर से ही नमस्कार कर दें।
- जिसका मन पूरी तरह परमात्मा में लग जाता है उसके लिए यह संसार अर्थहीन हो जाता है।
- आध्यात्मिक उन्नति चाहने वालों को तीन बातों को अपनी दिनचर्या का अनिवार्य अंग बना लेना चाहिए– (1) सन्ध्या (परमात्मा का सम्यक ध्यान), (2) स्वाध्याय (ईश्वर तथा मोक्ष सम्बन्धी पुस्तकों का पठन) और (3) सत्संग (आप्त पुरुषों से चर्चा व उपदेश श्रवण)।
- कोरे भाषायी ज्ञान तथा लच्छेदार भाषण से कोई लाभ नहीं, जब तक वह ज्ञान जीवन में न उतरे।
- बिना कर्म के ज्ञान बोझा है जो इसे बीच मझदार में डुबो देता है।
- जो व्यक्ति भाषायी ज्ञान (व्याकरण, धातु आदि) और भाषण कला में प्रवीण है परन्तु उसकी दृष्टि अर्थ और काम में ही लगी हुई है। उसकी स्थिति उस गिद्ध के समान है जो उड़ान तो खूब ऊँची भर

लेता है परन्तु उसकी दृष्टि पृथ्वी पर पड़े मृत पशु पर ही रहती है।

- सांसारिक पदार्थों की क्षणभुंगरता को देखते हुए भी जिसके मन में संसार के प्रति वैराग्य नहीं होता तथा अनुचित साधनों तथा भोगों में रत है वह आँखें होते हुए भी अन्धा है तथा बुद्धि होते हुए भी मूर्ख है।
- दूसरों को धोखा देने वाले को जब उसका फल मिलना शुरु होता है तो वह रो–रोकर आंसुओं से धोकर तथा मुँह फाड़कर (दहाड़ मार–मार कर) खाता है। ठीक ही तो है दिया किसी को धोखा तो अब ''धो'' और ''खा'' ।
- साधना में आने वाली बाधाओं को प्रभु के सामने रख दो और चलते रहो। प्रभु परम दयालु है, वे रक्षा करेंगे।
- परमपिता के स्मरण, ध्यान व उपासना करने में लाभ ही लाभ है और न करने में आपकी हानि ही हानि है। लाभ का सौदा शुभम्–शीघ्रम कीजिए।
- स्वतंत्रता (मुक्ति) ही मनुष्य जन्म का परम उद्देश्य है। मुक्ति की इच्छा करने वाले यदि वैभव जुटाने

और प्रतिष्ठा पाने में लगते हैं, वे धोखे में है। प्रतिष्ठा पिशाचिनी ने कितनों को शिखर से गड्वर (गड्ढे) में पटक दिया है। इससे दूर रहो।

- हमारी दृष्टि अर्जुन के सदृश केवल और केवल चिड़ियां की आँख (परमात्मा की प्राप्ति) पर होनी चाहिए तभी हम सही लक्ष्य भेधन कर पायेंगे, मुक्त हो पायेंगे। इसके लिए चित्त को इधर–उधर से हटाकर (भोगों से निवृत्ति), श्वाँस को स्थिर (प्राणायाम व योगाभ्यास) कर लक्ष्य बेधन कीजिए। अर्जुन ने यही तो किया था।
- प्रेम से बड़ी कोई शक्ति नहीं तथा ज्ञान से बड़ा कोई प्रकाश नहीं। परमात्मा के दीन हीन व जरुरत मन्द पुत्रों से प्रेम करो, परमात्मा आप से प्रसन्न हो जाएगा।
- वाणी का सही उपयोग प्रभु चर्चा में है और मन का परमात्मा चिन्तन में।
- परमात्मा की दया व न्याय व्यवस्था पर पूर्ण विश्वास रखो।
- जीवन में कुछ कष्ट, अभाव, बाधाएँ या प्रतिकूलताएँ आती है तो साहस छोड़ने के बज़ाय धैर्य पूर्वक

कारण व निदान पर विचार करो। यदि कुछ समझ न आये तो प्रार्थना कर प्रभु इच्छा पर छोड़ दो।

- हम कभी कभी अल्पज्ञता, स्वार्थ या मोह वश अचानक आये दुःख में छिपे सुख को नहीं देख पाते हैं। ठीक ही तो कहा है–

"मोह–स्वार्थ वश संकट से यू ही घबड़ाते हैं।
हम कभी–कभी भगवान की लीला समझ न पाते हैं।"

- परिस्थिति अनुकूल हो या प्रतिकूल स्थाई नहीं जैसे स्वप्न अच्छा हो या बुरा, जागने पर टूट ही जाता हैं। महर्षि याज्ञवल्क्य ने राजा जनक को यही तो समझाया था। अतः सभी अवस्थाओं मे शान्त रहने का अभ्यास करो।
- आदमी दो तरह के स्वप्न देखता है। एक सपना निद्रा के खुलने पर टूटता है तथा दूसरा सपना चिर निद्रा में जाते समय टूटता है। खुली आँख के सपने में अपने भविष्य को न बिगाड़ो।
- जो व्यक्ति जीवन भर भोग सामग्री एकत्र करने में लगा रहता है, उसे अन्त समय खाली हाथ जाने पर पश्चाताप की दारुण अग्नि में जलना पड़ता है।

- भोगों को संयमित कर कुछ योग भी करिए। योग वृद्धावस्था के लिए मत छोड़िये यदि युवावस्था में योग किया नहीं तो, बुढ़ापे में होगा नहीं, हाथ मलते रह जाओगे।
- किसी कार्यालय या अन्य शहर में कार्य पड़ने पर किसी परिचित की खोज करते है, मित्र ढूँढ़ते है जो कार्य में सहायता कर सके तो जिस परमात्मा से सबसे अहम कार्य सिद्ध होना है तो उस परममित्र, सच्चे मित्र से सम्बन्ध क्यों नहीं जोड़ते। वह अहम कार्य है– दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति, प्रकृति के आकर्षण से छुटकारा तथा मुक्ति।
- सांसारिक भोग, रोग व भय देते हैं। इनकी असलियत को परखकर इन्हें छोड़ दो तथा योगाभ्यास तथा यज्ञ कर्म करते रहो। जिनसे स्थायी सुख (आनन्द) की प्राप्ति होगी।
- यह शरीर मंजिल (प्रभु प्राप्ति) तक पहुँचाने के लिए आत्मा का वाहन है, माध्यम है न कि आत्मा शरीर के लिए।
- पवित्र उद्देश्य के लिए साधन की पवित्रता प्रथम आवश्यकता है। रिश्वत, दलाली, कामचोरी,

धोखाधड़ी कर धन अर्जित कर उसमें से थोड़ा अधिक दान, भोज आदि पर व्यय करने से कोई लाभ नहीं, यह तो अन्धकार का मार्ग है, पतन का रास्ता है। पवित्र कमाई में से एक रुपये का दान भी श्रेष्ठ है। ध्यान रहे दानादि भी सुपात्र को सुकार्य के लिए ही दें।

- ईश्वर की कृपा पाने के लिए जप व ध्यान के साथ साथ साधन की पवित्रता आवश्यक है। अर्थात् ईमानदारी तथा परिश्रम की कमाई।
- दूषित अन्न (अनुचित तरीकों से प्राप्त) से मन दूषित होता है। मन दूषित हुआ तो वह सत् मार्ग पर कैसे चलने देगा।
- जीवित माता पिता संसार में परमात्मा के प्रतिनिधि है, उनकी सेवा से परमात्मा प्रसन्न होते हैं। वह सन्तान धन्य है जिसने माता–पिता को अपनी सेवा व व्यवहार से सुख पहुँचाया है। ध्यान रहे जीवित माता की सेवा ही सच्ची सेवा है। मृत आत्मा की शान्ति या मुक्ति का भय दिखाना धार्मिक आतंकवाद नहीं तो और क्या है ?

- आगामी जन्म में सुख व शान्ति तो जीव द्वारा किये गये शुभ कर्मों, दीनों की सहायता, गौ–सेवा, दान पुण्य आदि के आधार पर मिलती है।
- संसार के सुखों, विषय भोगों की इच्छा तो क्या, वासना का सूक्ष्म तन्तु भी मन में न रहे, ईश्वर प्राप्ति की उत्कट अभिलाषा, निष्काम सेवा, ईश्वर प्रणिधान अर्थात् ईश्वरीय व्यवस्था प्राप्त प्रत्येक परिस्थिति में पूर्ण संतुष्ट।
- न अनुकूल परिस्थिति में अहंकार और न प्रतिकूल परिस्थिति में निराश या दुःखी होना और प्रत्येक श्वाँस पर प्रभु स्मरण आदि मुक्ति हेतु प्रारम्भिक अनिवार्यता है। ध्यान का सुदीर्घ अभ्यास, ईश विश्वास, धैर्य तथा प्रभु कृपा मुक्ति के आधार हैं।
- हरिद्वार तथा गया आदि में स्नान से मुक्ति मिल जाती तो वहां के समस्त मनुष्यों, जीव जन्तुओं आदि की मुक्ति हो गयी होती। पर ऐसा नहीं हुआ है।
- जब तक संसार से वैराग्य नहीं तब तक प्रभु प्राप्ति बन्ध्या पुत्र के समान असम्भव है।

- वैराग्य के लिए विवेक अर्थात् मैं कौन हूँ? परमात्मा कौन है? मैं संसार में क्यों आया हूँ;? आदि का ज्ञान प्राप्त करो।
- इसके लिए वेद, ग्यारह उपनिषद (ईश कठ, केन, मुण्डक, माण्डूक्य, प्रश्न, एतरेय, तैतरीय, वृहदारण्यक, छांदोग्य, और श्वेताश्वर) दर्शन, सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, शतपथ ब्राह्मण आदि का स्वाध्याय करें।
- जो ग्रन्थ परस्पर विरोधी तथा अनर्गल कथानकों से भरे पड़े हैं उनके पढ़ने में समय बर्बाद न करें तथा भ्रम से बचें।
- एक पुस्तक में पढ़ने को मिला कि कभी–कभी परमात्मा को भी भ्रम हो जाता है। विचारने की बात है कि सर्वज्ञ (सब कुछ जानने वाले) प्रभु को ही भ्रम हो गया तो सृष्टि का संचालन व व्यवस्था कैसे चलेगी। ऐसे भ्रामक ग्रन्थों से अज्ञान बढ़ता है और अज्ञान मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।
- मैं शरीर नहीं आत्मा हूँ कभी न मरने वाली आत्मा। शरीर के लिए सब कुछ कर रहे हो, कुछ आत्मा के लिए भी करो।

- वैराग्य का अर्थ संसार से भागना नहीं, संसार की वास्तविकता को समझकर आसक्ति से बचना है और परमात्मा से जुड़ना है। जल में कमलवत् रहने का अभ्यास करो। तालाब में कितना ही जलस्तर बढ़ जाये परन्तु कमलपत्र उससे ऊपर ही रहता है। प्रयास पूर्वक कमलपत्र पर पानी डालिए एक बूँद भी नहीं ठहर सकती। प्रभु की मौन शिक्षा को समझो।
- अग्नि होत्र (हवन) करना अति श्रेष्ठ कर्म हैं शास्त्रों में ''यज्ञों वै श्रेष्ठतमं कर्म'' कहकर इसे सर्वश्रेष्ठ कर्म कहा गया है।
- यह नित्य कर्म है जो परिवार में रोजाना होना चाहिए। अपनी अपनी परिस्थिति के अनुसार साप्ताहिक, पाक्षिक या न्यूनतम मासिक तो प्रत्येक परिवार में हवन होना आवश्यक है। मन्त्र पाठ व आहुतियों का सुप्रभाव प्रत्यक्ष अनुभव में आया है। ऋषियों ने इसकी महत्ता व परिणाम को प्रत्यक्ष किया था। इसी कारण आज भी प्रत्येक संस्कार, मांगलिक कार्य, व्यापार, उद्योग, शिक्षा के प्रारम्भ आदि सभी अवसरों पर इसका विधान है।

- घर में जब भी इसका सुयोग बने, बच्चों सहित परिवार के सभी सदस्य इसमें शामिल हों।
- अग्नि होत्र के बाद कुछ समय ध्यान में बैठने से आश्चर्यजनक शान्ति का अनुभव होता है, करके देखें।
- ''**परीक्ष्य लोकान्**.....।। मुं.उप. 1.2.12।।'' संसार के भोगों, सम्बन्धियों, मित्रों की वास्तविकता को परीक्षा करके अहितकर को छोड़ते जाइये। भोग तो रोग के जनक है, परिणाम में दुःखद है और सारे सम्बन्धी एक एक करके साथ छोड़ देते हैं। तब साथ रह जाता है जन्म–जन्मान्तर का साथी, एक परमात्मा। तो क्यों न उससे जुड़ने का अभी से प्रयत्न करें।
- अरे ऐसे रूप का क्या अभिमान जो थोड़ी बीमारी से कुरूप हो जाए, ऐसे भौतिक साधनों का क्या अभिमान जो प्रकृति के एक थपेड़े में ही समाप्त हो जाए। ऐसे शरीर का भी क्या अभिमान जो एक दिन छूटना ही है–

''क्या भरोसा है इस जिन्दगी का,
साथ देती नहीं यह किसी का।''

- जितना समय मनुष्य दूसरों के दोष ढूंढ़ने में लगाता है, उसकी चर्चा में रस लेता है उतना समय अपनी कमियों को देखने, ''ओ३म'' का मानसिक जप करने या सद्चर्चा में लगाये तो जीवन में आनन्द आ जाए और मन तथा वाणी के पाप से भी बच जाए।
- यदि मनुष्य हर समय शरीर को कमज़ोर, रोगी तथा मन को अपवित्र करने वाले विषय भोगों में लगा रहता है तो इससे दुःखद आश्चर्य क्या होगा?
- वह मनुष्य भाग्यशाली है जो अपने मन और इन्द्रियों को शुद्ध कर जप तथा निष्काम सेवा में लगाकर प्रभु प्राप्ति की दिशा में अग्रसर होता है। ऐसे व्यक्ति का जीवन ही धन्य तथा अनुकरणीय है। अपने मन व इन्द्रियों को खुला व स्वच्छन्द छोड़ने वाले व्यक्ति को टकराने या गड्ढे में गिरने से कोई नहीं रोक सकता।
- पूजा का अर्थ है परमात्मा की आज्ञा का पालन। बाह्य क्रियाओं को आन्तरिक साधना का साधन बनाओ। बाह्य क्रियाओं में अटके रहना तो जड़ता की निशानी है। अन्दर प्रवेश करो, अन्तः करण शुद्ध करो, परम प्रभु आपके अन्दर ही विराजमान है।

परन्तु उनका दर्शन बाहरी आँखों से कभी नहीं होता।

- प्रार्थना में शब्द, विचार तथा क्रिया में एकरूपता से ही प्रगति होती है। हम बोलते हैं– ''तुम हो एक अगोचर''। परन्तु विचार तथा क्रिया से परमात्मा को गोचर बना दिया है।
- अगोचर का अर्थ है कि परमात्मा का मनुष्य जैसा शरीर तथा गोचर (इन्द्रियाँ हाथ, पैर, कान आँख आदि) नहीं है तथा परमात्मा को इन आँखों से नहीं देखा जा सकता है।
- बोलते है– ''विषय विकार मिटाओ.....।'' कामना करते है अति सुन्दर पति या पत्नी की, भ्रष्ट साधनों से धन कमाने की, राग व द्वेष बढ़ाने वाले साधनों. ....। परमात्मा भी सोचता होगा कि ऐसे भक्तों का क्या करुँ? इसी कारण धार्मिक क्रियाएँ तो खूब हो रही है परन्तु धर्म घट रहा है।
- ''तेली का बैल'' सुबह से शाम तक चलते रहने पर भी वहीं का वहीं रहता है, आँखों पर पट्टी जो बंधी है। भाईयों और बहिनों ज्ञान चक्षुओं को खोलो।

- भारतीय प्राचीन ऋषि–मुनि विचारक बहुत ही समझदार दूरदर्शी तथा हितचिन्तक थे। उन्होंने अनेक (लाभ देने वाली) छोटी छोटी क्रियाओं को दिनचर्या का अंग बना दिया था। जो कई दृष्टियों से उपयोगी थी। मात्र एक क्रिया ''शाम हो गई दिया बाती कर दो।'', अर्थात् हाथ मुँह धोना, शुद्ध घी तथा कपूर का दीपक (दीया) जलाना, परिवार के सदस्यों का इकठ्ठा होना, सन्ध्या जप आदि करना। एक व्यवस्था से कई लाभ।
- एक निशान देखिए – घी और कपूर का दीपक जलने से घर का वातावरण शुद्ध होना, नकारात्मक ऊर्जा का निष्कासन, मन का शान्त होना, शुभ विचारों का आगमन, अच्छी नींद का आना, बुरे सपने न आना आदि। ''दीया बाती'' का स्थान लगभग सर्वत्र अगरबत्ती ले चुकी है।
- जो अपना है उसे ही अपना मानोगे तो आपको पछताना नहीं पड़ेगा। अपना कौन होता है ? जो हमेशा हमारे साथ रहता है, हर परिस्थिति में प्रत्येक स्थान पर किसी भी काल में, किसी भी हाल में कभी साथ नहीं छोड़ता। जो अपना नहीं है, साथ

छोड़ जाने वाला है, उसे अपना मानने की भूल मत करो।

- जीव अकेला ही आया था ओर आगे की यात्रा अकेले ही करनी होगी। धर्म ही उस यात्रा में साथ देगा, बाकी सब यही छूट जायेगा। अतः शरीर छूटने से पहले अधिक से अधिक धर्म का संचय करो।
- ध्यान रहे बाहरी दिखावे की क्रियाएँ धर्म नहीं होती। जो क्रियाएँ व कर्म अन्तःकरण को पवित्र नहीं करती, उन्हें धर्म मानने की भूल मत करो।
- आप संसार से छिपकर पाप कर्म कर सकते हो परन्तु परमात्मा से छिपकर नहीं कर सकते, उसका फल तो भोगना ही पड़ेगा। मात्र तीर्थों में जाने, जल चढ़ाने, मंदिरों में घण्टों बजाने से पाप कर्म के फल से बच नहीं सकते, जो भी शुभ–अशुभ कर्म हमारे द्वारा किए गए हैं, उनका फल हमें अवश्य ही भोगना है।
- हम सच्चे हृदय से परमात्मा की ओर एक कदम चलेंगे तो परमदयालु प्रभु दस कदम आगे बढ़कर

हमें उठा लेते हैं, शरण में ले लेते हैं। जरा चलकर तो देखों, आनन्द आ जायेगा।

- कुछ लोग ऐसा अज्ञान फैलाते है कि अगले जन्मों में मनुष्य मनुष्य ही बनेगा भैंस भैंस ही बनेगी, स्त्री स्त्री ही बनेगी आदि आदि। ऐसा कहने व मानने वाले दया के पात्र है। परमात्मा उन्हें अज्ञान से बाहर निकालें। परमात्मा भी उन्हें तब ही सहायता देंगे जब वे निकलना चाहें, कुछ प्रयास करें।
- जिनकी बुद्धि Upper story to let (अर्थात स्वयं के विवेक का अभाव) हैं, उसमें कोई भी धूर्त या आतंकवादी डेरा डाल सकता हैं। किसी भी बात को मानने से पूर्व बुद्धि से जानो।
- कहने को तो सभी कहते हैं कि परमात्मा सभी जगह है परन्तु व्यवहार में परमात्मा की उपस्थिति को अनुभव कर कार्य करें, आचरण करें तो आनन्द आ जाये।
- आत्मा की उन्नति में अहंकार बहुत बड़ी बाधा है। धन, बल, रूप, बुद्धि, आयु, पद, योग्यता, आश्रम (गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास) प्रवचन कला, वाक चातुर्य आदि अहंकार के अनेक घटक है। कुछ

लोगों को यह कहते सुना होगा कि ''मुझे बिल्कुल भी अहंकार नहीं है।'' वास्तविकता यह है कि यह अहंकार का प्रच्छन्द व खतरनाक रूप है।

- परमात्मा की प्राप्ति का उपाय है परमात्मा की आज्ञा का पालन, परमात्मा के गुणों यथा दया, करुणा, प्रेम, न्याय, उदारता, ज्ञान, उपकार, त्याग, आदि को धारण करना तथा अपने दुरितों को हटाना। इसका उपाय है हृदय में विराजमान परमात्मा की नित्य उपासना करना। **उपासना से उपास्य के गुण उपासक में आने लगते हैं।**
- परमात्मा की ओर से हृदय में आने वाली सूक्ष्म ध्वनि, प्रेरणा को सुनो, तदनुकूल आचरण करो। कुछ रो। कुछ ही समय में जीवन कुछ से कुछ हो जायेगा। '

ज्योति फिर आनन्द की, अन्दर ही जग जायेगी।
भक्ति कर भगवान की, काम तेरे जो आयेगी।।''

- उपासना (उप+आसना) का अर्थ है परमात्मा के उप (समीप) आसन (बैठना) लगाना। अर्थात् अन्दर से पमात्मा के समीप रहना, परमात्मा के गुणों का चिन्तन, प्रभु की स्तुति/प्रार्थना मन में करते रहना।

निर्विकार निराकार प्रभु की कोई मूर्ति नहीं, वह तो सर्वव्यापक, सब जगह विद्यमान है। जो सर्वव्यापक है उसकी आकृति हो ही नहीं सकती।

- सम्पूर्ण सृष्टि, आकाश, सूर्य, चन्द्र, तारे, पृथ्वी, नदियाँ, पर्वत, समुद्र, वृक्ष, फूल–पत्ती, मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंग सभी परमात्मा की कृति (रचना) हैं, उसकी इन कृतियों में प्रभु की आकृति को, उसकी उपस्थिति को अनुभव करो। उसके रचना कौशल व बुद्धि चातुर्य को जानने की कोशिश करों।

ध्यान लगाकर जो तुम देखो, सृष्टि की सुघड़ाई को।
बात बात में पाओगे, उस ईश्वर की चतुराई को।।

- बाहर परमात्मा की रचना को देखो तथा हृदय में परमात्मा की आकृति (ज्योति) को खोजो। इन गोलकों (आँखों) से उसके दर्शन नहीं होते। यह अनुभूति का विषय है। वह तो सदैव हमारे सबसे अधिक निकट (हृदय में) है–

मन के दपर्ण में है, तस्वीरें यार (प्रभु) की।
जब जरा गर्दन झुकाई, देख ली।''

पर समस्या यह है कि गर्दन झुकती ही नहीं अहंकार छूटता ही नहीं। इसे छोड़ो प्रभु दूर नहीं।

- सर्वोपरि को अपने हृदय में ढूँढ़ो पर अपने को सर्वोपरि (ब्रह्म) समझने की भूल कदापि न करो।
- प्रत्येक श्वास पर परमात्मा के निज नाम ''ओ३म'' का जप कीजिए। इस तरह मन को सांसारिक चिन्तन से शनैःशनैः मुक्त कर आत्मदर्शन की धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा कीजिए।
- हमारा अन्त समय कब होगा किसी को पता नहीं, कौन कह सकता है कि अगला माह अथवा दिन तो क्या, अगली श्वाँस भी हम ले पायेंगे या नहीं? यह सोचकर –

श्वाँस–श्वाँस पर ओ३म कह, वृथा श्वाँस मत खोय।
न जाने या श्वाँस को, आवन होय न होय।।

- सुना करते हैं कि मृत्यु समय जैसी मन की दशा होती है वैसा ही अगला जन्म मिलता है। साधकों! जीवन भर मन ने जैसा अभ्यास किया है अन्त समय भी उसकी वैसी ही दशा रहेगी।
- यदि आपका शरीर इसी समय छूट जाये तो आपके द्वारा एकत्र संसार का वैभव, झूँठी मान–प्रतिष्ठा

किस काम आयेगी। कुछ समय में आपके प्रियजन आपको भूल जायेंगे। आगे की यात्रा तो आपको अकेले ही और खाली हाथ ही करने पड़ेगी। अतः सुदीर्घ यात्रा में काम आने योग्य पूंजी (योगाभ्यास एवं परोपकार) को अभी से इकठ्ठा करो और परमात्मा के बैंक में जमा करके भूल जाओ।

*****

जो मिला है वह हमेशा, पास रह सकता नहीं।
कब बिछुड़ जाए यह कोई, राज़ कह सकता नहीं।
ज़िंदगानी का खिला, मधुवन किसी का है दिया।
मै नहीं मेरा नहीं, यह तन किसी किसी का है दिया।
जो भी अपने पास है, वह धन किसी का है दिया।
जग की सेवा, खोज अपनी, प्रीति उनसे कीजिये।
जिंदगी का राज़ है यह जानकार जी लीजिये।
साधना की राह पर, यह साधन किसी का है दिया।
जो भी अपने पास है, वह सब किसी का है दिया।
मैं नहीं मेरा नहीं,.....

*****

।। ओ३म् ।।

5. परिशिष्ट

संत समागम हरि कथा तुलसी दुर्लभ दोय ।
सूत दारा अरु लक्ष्मी पापी के भी होय ॥

भगवान की कथा और सत्संग—ये दो दुर्लभ वस्तुएँ हैं। पुत्र और धन तो पापी मनुष्य के भी प्रारब्धानुसार होते ही हैं।—यह कोई बड़ी बात नहीं।

कबीर सो धन संचे, जो आगे को होय।
सीस चढ़ाए पोटली, ले जात न देख्यो कोय।।

कबीर कहते हैं कि उस धन को इकट्ठा करो जो भविष्य में काम आए। सर पर धन की गठरी बाँध कर ले जाते तो किसी को नहीं देखा।

दानं भोगो नाशस्तिस्त्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति॥

दान, भोग, व नाश - ये वित्त की तीन ही गतियाँ हैं। जो सत्पात्र को दान नहीं देता है, और स्वयं भी भोग नहीं करता है, उसके वित्त की तीसरी गति अर्थात नाश होता है।

प्राणी मात्र सुख चाहता है, इसमें कोई दो राय नहीं है। संसार की शानौशोकत और राग-रंग में सुख नहीं है; दुःख रहित, सम्पूर्ण और शाश्वत सुख धर्म में ही है। पाप से दुःख और धर्म से सुख होता है, यह भी तय है। तो हम इस पर विचार करें कि जिससे सुख मिलता है, वह धर्म कौनसा है? आर्यावृत्त के सर्वोत्तम आदर्शों के अनेक प्रतिबिम्बों में से एक सुन्दर प्रतिबिम्ब हृदय में धारण कर एक कवि ने संसार के प्राणियों को संक्षेप में सभी धर्मों का सार तत्त्व समझाने का प्रयास किया है-

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं, श्रुत्वा चैवावधार्यताम्
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत्।।

अर्थात् 'धर्म का सर्वस्व जिसमें समाया है, ऐसे धर्म का सार सुनिए और सुनकर हृदय में उतारिए कि अपनी आत्मा को जो दुःखदायी लगे, वैसा आचरण दूसरों के साथ मत करिए।'

सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते। चरश्चैरैवेति चरेवेति...!
॥ ए. ब्रा. ३३.३ ॥

सूर्य को देखो कि वह कभी विश्राम नहीं करता इसीलिए निरन्तर आगे बढ़ो, आगे बढ़ो।

प्रीणाति य सुचरितैः पितरं स पुत्रो यद्भर्तुरेव हितमिच्छति तत्कलत्रम् । तन्मित्रमापदि सुखे च समक्रियं यत् एतत् त्रयं

जगति पुण्यकृतो लभन्ते ॥

पिता को अपने सद्वर्तन (व्यवहार) से खुश करनेवाला पुत्र, केवल पति का हित चाहनेवाली पत्नी, और जो सुख-दुःख में समान आचरण रखता हो ऐसा मित्र – ये तीन जगत में पुण्यवान को ही प्राप्त होते हैं।

ओं ईशा वास्यमिदगं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥ ईश १॥

इस जगत मे जो कुछ भी चर-अचरात्मक है, जो कुछ हमारे देखने-सुनने मे आ रहा है, सब-का-सब परमात्मा से परिपूर्ण है, इसका कोई भी अंश उनसे रहित नहीं है, अत: जगत मे आसक्ति और ममता का त्याग करके, केवल कर्तव्यपालन करते हुए इसका यथाविधि उपयोग करो। किसी के धन का लोभ मत करो।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतगं समाः ।

एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥ ईश २॥

इस जगत मे शास्त्रविहित कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीवित रहने की इच्छा करनी चाहिए। इस प्रकार अपने पूरे जीवन को परमेश्वर के प्रति समर्पित कर दो, इससे कर्म तुझे बंधन मे नहीं डाल सकेंगे, इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी मार्ग कर्म-बंधन से मुक्त होने का नहीं है।

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते॥ ईश ६॥

हे मनुष्यों ! जो लोग सर्वव्यापी न्यायकारी सर्वज्ञ सनातन सब के आत्मा अन्तर्यामी सब के द्रष्टा परमात्मा को जान कर सुख दुःख हानि लाभों में अपने आत्मा के तुल्य सब प्राणियों को जानकर धार्मिक होते हैं वे ही मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये॥ ईश १५॥

सब मनुष्यों के प्रति ईश्वर उपदेश करता है कि हे मनुष्यों ! जो मैं यहां हूँ वही अन्यत्र सूर्य्यादि लोक में, जो अन्य स्थान सूर्य्यादि लोक में हूँ वही यहां हूँ सर्वत्र परिपूर्ण आकाश के तुल्य व्यापक मुझ से भिन्न कोई ब़डा नहीं मैं ही सब से बडा हूँ। मेरे सुलक्षणों से युक्त पुत्र के तुल्य प्राणों से प्यारा मेरा निज नाम 'ओ३म्' यह है। प्रेम और सत्याचरण से शरण लेता उनकी अन्तर्यामीरूप से मैं अविद्या का विनाश कर उसके आत्मा का प्रकाश करके शुभ गुण कर्म स्वभाव वाला कर सत्यस्वरूप का आवरण स्थिर कर योग से हुए

विज्ञान को दे और सब दुःखों से अलग करे मोक्षसुख को प्राप्त करता हूँ।

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मांतगं शरीरम्।
ओं क्रतो स्मर कृतगं स्मर क्रतो स्मर कृतगं स्मर॥ ईश १७॥

मनुष्यों को चाहिए कि जैसी मृत्यु समय में चित्त की वृत्ति होती है और शरीर से आत्मा का पृथक होना होता है वैस ही इस समय भी जानें। इस शरीर की जलाने पर्यन्त क्रिया करें। जलाने पश्चात् शरीर को कोई संस्कार न करें। वर्तमान समय में एक परमेश्वर ही की आज्ञा का पालन उपासना और अपने सामर्थ्य को बढ़ाया करें। किया हुआ कर्म निष्फल नहीं होता ऐसा मान कर धर्म में रुचि और अधर्म में अप्रीति किया करें।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमौक्तिं विधेम॥ ईश १८॥

जो सत्यभाव से परमेश्वर की उपासना करते यथाशक्ति उसकी आज्ञा का पालन करते और सर्वोपरि सत्कार

के योग्य परमात्मा को मानते हैं उनको दयालु ईश्वर पापाचरणमार्ग से पृथक कर धर्मयुक्त मार्ग में चला के विज्ञान देकर धर्म अर्थ काम और मोक्ष को सिद्ध करने के लिये समर्थ करता है इससे एक अद्वितीय ईश्वर को छोड़ किसी की उपासना कदापि न करें।

******

तद्यथा तृणजलायुका तृणस्यान्तं गत्वाऽन्यमाक्रम -- माक्रम्यात्मानमुपसँहरत्य् एवमेवायमात्मेदँ, शरीरं निहत्याविद्यां गमयित्वाऽन्यमाक्रम -- माक्रम्याऽऽत्मानमुपसँहरति ॥ बृहद. ४.४.३॥
देहान्तर के समय जिस प्रकार जोंक (तृणजलायुका) एक तृण के अंतिम भाग मे पंहुचकर दूसरे तृण रूप आश्रय को पकड़कर अपने इस शरीर को सिकोड़ लेता है, वैसे ही यह जीवात्मा इस वर्तमान शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर को पकड़ लेता है।

चक्षुष्टस् वा मूर्ध्नस् वा अन्येभ्यस् वा शरीरदेशेभ्यःतमुत्क्रामन्तं प्राणोऽनूत्क्रामति .....

तं विद्याकर्मणी समन्वारभेते पूर्वप्रज्ञा च ॥ बृहद. ४.४.२ ॥
मृत्यु के समय जीवात्मा नेत्र द्वारा, शिर द्वारा या शरीर के किसी अन्य भाग द्वारा बाहर निकल जाता है। उस समय उसके साथ विद्या, कर्म (जैसा उसको विहित-प्रतिषिद्ध ज्ञान व धर्म-अधर्म रूपी कर्म) पूर्वप्रज्ञा (अनुभूत विषयों की वासना) जाती है, इन्ही तीनों के अनुसार आगामी जन्म होता है।

सति मूल तद्विपाको जातिः आयुः भोगाः ॥ योगसूत्र २.१३ ॥
जीव के जन्म से ही प्रारब्धानुसार (मन में संस्कार/क्लेश रूपी मूल के रहने तक) तीन चीजें निर्धारित रहतीं हैं- 1. जाति (मनुष्य, कीट, वृक्षादि) 2. आयु (जीवन काल) 3. भोग (इंद्रियजन्य सुख-दुख), जैसे-जैसे कर्म और वासना परिपक्व होती हैं, वैसे-वैसे प्रकृति के सत्व,रज, तम के कारण भोगरूपी कार्यों को प्रारम्भ करती हैं।

सोम्य पुरुषस्य प्रयतो वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायाम् ॥ छा० ६.८.६ ॥
मृत्यु के समय इस पुरुष की वाणी मन मे लीन हो जाती है (फिर ये बोल नहीं सकता है), मन प्राण में (पहचान नहीं सकता), प्राण तेज में (सांस भी रुक जाती है लेकिन शरीर गरम रहता है) और तेज परमात्मा मे लीन हो जाता है।

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति न चेदिहावेदीन्महती विनष्टिः । भूतेषु भूतेषु विचित्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥केन० २० ५॥

मानव –जन्म अत्यंत दुर्लभ है, अगर परमात्मा को जान लिया तो मानव शरीर की सार्थकता है अन्यथा महान विनाश हो जाएगा, बार – बार जन्म-मृत्युरूप संसार के प्रवाह मे बहना पड़ेगा। मनुष्य जन्म के सिवा अन्य योनियों मे जीव केवल कर्मों का भोग कर सकता है, परमात्म प्राप्ति नहीं कर सकता।

ओ३म् सर्वे भवन्तु सुखिनः। सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु। मा कश्चित् दुःख भाग्भवेत् ॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

हे ईश सब सुखी हों, कोई न हो दुखारी। सब हों निरोग भगवन, धन धान्य के भण्डारी।। सब भद्रभाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों। दुखिया न कोई होवे, सृष्टि में प्राण धारी।। हे ईश सब सुखी हों....।।

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षँ शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

शान्तिः कीजिये, प्रभु त्रिभुवन में, जल में, थल में और गगन में
अन्तरिक्ष में, अग्नि पवन में, औषधि, वनस्पति, वन, उपवन में
सकल विश्व में अवचेतन में!
शान्ति राष्ट्र-निर्माण सृजन में, नगर, ग्राम में और भवन में
जीवमात्र के तन में, मन में और जगत के हो कण कण में ....॥

॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

*****

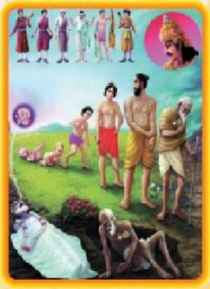

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे, भार्या गृहद्वारि जनः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे, धर्मानुगो गच्छति जीव एकः।।

मनुष्य जब मरता है तब सारी धन–संपत्ति पृथ्वी पर ही पड़ी
रह जाती है, पशु (कार वाहन आदि) बाड़े में खड़े रहते हैं,
जीवन–साथी (पति/पत्नी) घर के दरवाजे तक साथ देता है,
मित्र बंधु–सम्बन्धी श्मशान तक साथ चलते हैं,
और यह शरीर भी चिता पर जलकर भस्म हो जाता है।
यदि जीवात्मा के साथ परलोक कोई जाता है,
तो कर्म ही है, जो उसने जीवित रहते हुए अच्छा–बुरा
धर्म–अधर्म किया है, और कोई साथ नहीं जाता।